

मनोरोगों में श्रीमद्भगवद्गीता एवं कठोपनिषद् की भूमिका

नीलम त्रिपाठी

शोध छात्रा, डिपार्टमेंट ऑफ योग, फैकल्टी ऑफ सोशल साइंस एण्ड ह्यूमैनिटीज, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना

डॉ. धीरेन्द्र सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ योग, फैकल्टी ऑफ सोशल साइंस एण्ड ह्यूमैनिटीज, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना

शोध सारांश :-

योग शास्त्र भी मन को अन्तःकरण का एक भाग मानता है। मन और शरीर के तुलना में मन का मूल्य हजारों गुना अधिक है। क्योंकि 'सुखाधुपब्धिसाधनमिन्द्रियं मनः' अर्थात् मन ऐसी इन्द्रिय है जो अन्य इन्द्रियों के अनुकूल एवं प्रतिकूल संवेदनों को ग्रहण कर क्रमशः सुख तथा दुःख की अनुभूति करवाता है। अतः कहा जा सकता है कि मन के नियमन पर ही संवेदनाग्राह्य सुख दुःख का भाग निर्भर है। मन में विकृत विचार, व्यवहार, चिन्तन, असफलता, निरसता आदि के कारण ही मनोविकार आते हैं, जो मनोरोग का कारण बनते हैं। मानसिक चिकित्सा की प्रचलित विधियाँ, मनोविज्ञान के तौर-तरीके मिल-जुलकर भी इस चुनौती का सामना करने में प्रायः असमर्थ रहें हैं। ऐसे में चिन्तित विशेषज्ञों की दृष्टि विश्व भर के पुरातन ज्ञान भण्डार एवं प्राचीन ऋषियों द्वारा अन्वेषित योग दर्शन विज्ञान पर जा टिकी है।

कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं आध्यात्मिक जीवन जीने की कला का एक व्यावहारिक ग्रंथ है, वर्तमान परिस्थितियों में उत्पन्न विकृतियों के समाधान में कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान उनका उचित मार्गदर्शन कर सकता है। इन ग्रंथों में वर्णित श्रेष्ठ आत्म ज्ञान, निष्काम कर्म, योग साधना व भक्ति मनुष्य को वर्तमान परिस्थितियों में आत्मविश्वास बढ़ाने एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने की शिक्षा देते हैं।

मुख्य बिन्दू : श्रीमद्भगवद्गीता, कठोपनिषद्, योग, मनोरोग।

प्रस्तावना:

आज की प्रतिस्पर्धात्मक दौड़ में मानव एक विषम स्थिति में पहुँच गया है। कोरोना महामारी आज एक विश्व व्यापी समस्या का रूप ले चुकी है। सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक चुनौती बन गयी है।¹ कोरोना से प्रभावित देशों में 20 प्रतिशत मानसिक रोगी बढ़े हैं। आई. सी. एम. आर. के मुताबिक हर पांच में से एक भारतीय किसी न किसी मानसिक रोग का शिकार है।² विश्व स्वास्थ्य ने भी इस महामारी के दौर में मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देने की बात की है। कोरोना वायरस डर, चिंता और अवसाद का सबसे बड़ा कारण बना हुआ है। राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने 2017 में मानसिक स्वास्थ्य की विश्व कांग्रेस के उद्घाटन समारोह को सम्बोधित करते हुए यह गंभीर चिंता व्यक्त की थी यद्यपि तेजी से बढ़ते शहरीकरण और आर्थिक विकास की मजबूत पकड़ ने भारत को दुनिया की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बना दिया है, आंकड़े बताते हैं कि यहाँ अवसाद की दर

¹ वैदिक वाग् ज्योतिः, वर्ष 2020, अंक 14, vol. 8, पेज संख्या 45

² www.bhaskar.com, Accourding to the survey corona effect increased 20% of mental patients in the country.

भी उच्चतम दरों में से एक है। भौतिकतावादी इस युग में मानव का जीवन तनावपूर्ण, व्याधिग्रस्त, मन व बुद्धि से विचलित हो गया है।³ एक ओर जहाँ उसका जीवन आधुनिक सुख सुविधाओं से परिपूर्ण होता जा रहा है, वहीं दूसरी ओर इनके दुरुपयोग से पैदा अनेक अजैविक असन्तुलन, जो न सिर्फ मानव के लिए अपितु समस्त पर्यावरण के लिए हानिकारक है, उत्पन्न हो रहे हैं।

महामारी एवं आधुनिक विकास की इस अंधी दौड़ में मनुष्य अपने तथा अपने परिवार व समाज के साथ सामंजस्य-सन्तुलन स्थापित नहीं कर पा रहा है, जिसके कारण वह अनेक बीमारियों से ग्रस्त होता जा रहा है। काम, क्रोध, मोह, राग, द्वेष जैसे आन्तरिक द्वन्द्व उसे अन्दर से खोखला करते जा रहे हैं तथा तनाव, चिंता, अवसाद, उदासी, आत्मविश्वास एवं अधीर, नकारात्मकता का बढ़ना, भय जैसी विकृतियाँ उसे अपना ग्रास बना लेती हैं।

कठोपनिषद् में बड़ा ही सुन्दर वर्णन मिलता है, 'दूरमेते विपरीते विषूची, अविद्या या च विद्येति ज्ञाता'।⁴ अविद्या और विद्या दो ऐसे विपरीत मार्ग हैं जिसके फल भी अलग-अलग हैं। जिनकी भोगों में आसक्ति होती है वह अविद्या के मार्ग को चुनते हैं और उसी में रत रहते हैं। जबकि विद्या रूपी ज्ञान को आत्मसात करने वाले अविद्या को दुःखरूप मानते हैं, वह विषम से विषम परिस्थिति में खुश एवं शांत रहते हैं। अतः आत्मशांति ही परम सुख है, जिससे आज का मानव अनभिज्ञ है। वह भौतिक साधनों को सुख का कारण समझकर अपनी इच्छाओं को एक सुख के बाद दूसरे सुख की आशा में उन्हें ही जुटाने में लगा रहता है, सुख तो उसे प्राप्त नहीं होता अपितु आन्तरिक शांति भी भंग हो जाती है। परिणामस्वरूप वह अनेक बीमारियों का शिकार हो जाता है।

वर्तमान विपरीत परिस्थितियों में यदि मानव कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता के योग तत्वों का प्रतिदिन अभ्यास करता है तो वह अपनी शारीरिक व मानसिक विकृतियों को दूर कर सकता है या उत्पन्न होने से रोक सकता है और एक स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है। 'लिप्यते न स पापेन पद्म पत्रमिवाम्भाना'⁵ जो मनुष्य अपने कर्मों को प्रभु में अर्पित करते हुए कर्म करता है और किसी भी प्रकार से कर्मफल में आसक्ति नहीं होता, वह संसार में रहते हुए भी उसी प्रकार समस्त विकृतियों एवं बुराइयों से दूर रहता है जैसे कमल का पत्र पानी में रहते हुए पानी से लिप्त नहीं होमा। जो इस प्रकार स्वयं को ईश्वर के प्रति समर्पित कर जीवन जीते हैं, वह भयमुक्त, सुखी एवं आनन्दित जीवन व्यतीत करते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता व कठोपनिषद् का संक्षिप्त परिचय : उपनिषद् भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। जिसकी निर्मल धारा सदियों से मानव जीवन का उद्धार कर रही है। उपनिषद् का अर्थ विभिन्न दार्शनिकों ने विभिन्न रूपों में वर्णित किया है। उपनिषद् का अर्थ—ब्रह्म ज्ञान, अध्यात्मिक विद्या है, जीवन का गुप्त ज्ञान। उपनिषद् के अध्ययन से मानव अज्ञान से अनन्त ज्ञान की ओर, सूक्ष्म शक्ति से अनन्त शक्ति की ओर, सांसारिक दुःखों से अनन्त आनन्द की ओर तथा मोह बन्धन से अनन्त शान्ति की ओर प्रस्थान करता है।⁶

मुक्तिकोपनिषद् में उपनिषदों की संख्या 108 बतायी गयी है,⁷ जिसमें से कठोपनिषद् भी एक है। यह बहुत ही सुन्दर उपनिषद् है, इसका वर्णन कृष्ण यजुर्वेद की कठ शाखा में मिलता है। इसमें दो अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में 3-3 वल्लियाँ हैं,

³ वैदिक वाग् ज्योतिः, वर्ष 2019, अंक 12, vol. 7, पेज संख्या 136

⁴ कठोपनिषद्-1/2/4

⁵ श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 5/10

⁶ विश्वोई, मनोज, 'उपनिषद् सार संग्रह', किताब महल

⁷ 'आचार्य' पं० राम शर्मा एवं शर्मा भगवती देवी, वर्ष 2016, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, पृ० 12

जिसमें वाजश्रवा के पुत्र नचिकेता और यम के बीच हुए संवाद का बड़ा ही ज्ञानवर्द्धक वर्णन है। कठोपनिषद् की शुरुआत शान्तिपाठ से होती है—

**ऊँ सह नावतु। सह नौ भुनक्तु।
सह वीर्यं करवावहै। तेजसि नावधीतमस्तु।
मा विद्विषावहै ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।⁸**

जिसमें गुरु और शिष्य दोनों की मंगलकामना की गयी है, दोनों के बल में वृद्धि हो, दोनों के ज्ञान में तेजस्वरूप वृद्धि हो। नचिकेता के पिता 'वाजश्रवा' द्वारा अश्वमेध यज्ञ किया गया इस यज्ञ में यज्ञ करता को अपनी प्रिय सम्पूर्ण सम्पत्ति दान में देनी होती थी। यज्ञ उपरान्त वाजश्रवा ऋषि द्वारा जीर्ण गायों को दान में देते देख, नचिकेता अपने पिता जी से पूछते हैं कि आप मुझे किसे दान करोगे, बार-बार पूछने पर, पिता क्रोधवश उसे यमराज को देने की बात कहते हैं। अतः यह सुनकर आज्ञाकारी पुत्र होने के गुण को निभाते हुए वह यमराज के पास चला जाता है। अतः इसमें यम व नचिकेता का ब्रह्म विद्या का सुन्दर वर्णन है।⁹ कठोपनिषद् में आत्मा की व्याख्या के लिये सुन्दर रूपक का प्रयोग हुआ है। यहाँ रथ की तुलना मानव के शरीर से की गई है। कठोपनिषद् का मुख्य विषय यद्यपि आत्मविद्या है, फिर भी इसके साथ-साथ आचार एवं व्यवहार तत्त्व, व्यक्तित्व निर्माण, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य मार्ग, विद्या-अविद्या एवं नैतिक मार्ग का वर्णन मिलता है।¹⁰ एक जिज्ञासु बालक नचिकेता के माध्यम से एक आदर्श जीवन जीने की प्रेरणा दी गयी है।

श्रीमद्भगवद्गीता भारतीय साहित्य का एक अनमोल हीरा है। जिसकी चमक से आज सम्पूर्ण विश्व चमक रहा है। गीता को उपनिषदों का सार कहा गया है।¹¹ कहा जाता है कि अगर समस्त उपनिषदों को गाय माना जाये, कृष्ण को उन गायों को दुहने वाले, और अर्जुन को वह बछड़ा, जो गीतारूपी अमृत ज्ञान को दूध के समान पीने वाला तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। वर्तमान में हम सभी अर्जुन के समान ही हैं जिन्हें गीता ज्ञान रूपी दूध की अति आवश्यकता है। जब अर्जुन कुरुक्षेत्र के मैदान में अपने परिजनों को देखकर मोहवश अपना कर्त्तव्य भूलकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है, उसकी स्थिति मानसिक रोगी के समान हो जाती है। तब श्रीकृष्ण अर्जुन को गीता का उपदेश देते हैं और मोह शोक छोड़कर निष्काम कर्म के लिए प्रेरित करते हैं। कर्म करना ही तेरा धर्म है। हे अर्जुन! उठ युद्ध कर।

हमें भी अर्जुन की भाँति अपने कर्त्तव्य मार्ग पर अग्रसर रहना चाहिये। हमारा कर्म हमारे मोह का कारण नहीं बनना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविंद से उद्धृत एक दिव्य अमृत ज्ञान है जिसको जो मानव अपने जीवन में आत्मसात करता है, वह कैसी भी परिस्थिति हो उसमें सकारात्मकता ढूँढ़ ही लेता है। गीता में वर्णित योग तत्त्व मानव का कल्याण कर, उसे सद्मार्ग का अनुगामी बनाता है। यद्यपि गीता का ज्ञान 5000 वर्ष पूर्व अर्जुन को प्राप्त हुआ था तथापि यह आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है बल्कि वर्तमान परिस्थितियों में ज्यादा उपयोगी है।

आधुनिक समय में अनेक महापुरुषों ने गीता के ज्ञान को अपने जीवन में अपनाया। महात्मा गांधी जी एवं श्री अरविंद जी गीता को माता कहते थे, उनका मानना था कि गीता का ज्ञान पग-पग पर सांसारिक माता की तरह हर परिस्थिति में अपने साधक का ध्यान रखती है, उसे संस्कार देती है।¹² सही गलत को बोध कराती है। गीता का मुख्य उद्देश्य है लोक कल्याण करना है।

⁸ गीयन्दका, हरिकृष्ण दास, सं० 2074, 'ईशादि नौ उपनिषद', गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ० 75

⁹ 'आचार्य' पं० राम शर्मा एवं शर्मा भगवती देवी, वर्ष 2016, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, पृ० 50

¹⁰ गौड़, डॉ० अक्षय कुमार, 'उपनिषद् एवं योगवाशिष्ठ सार', पृ० 96

¹¹ सिन्हा, प्रो० हरेन्द्र प्रसाद, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 66

¹² गांधी, महात्मा, वर्ष 2009, 'गीता माता', इण्डिया बाईडिंग हाउस

मानव को स्वार्थ की भावना से हटाकर, परार्थ-भावना में लगाना है। आज का मानव भी अर्जुन की तरह एकांगी है। उसे अपने विचारों में सन्तुलन, अपनी परिस्थितियों को समझने के लिए गीता का ज्ञान आवश्यक है।¹³

कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता में योग साधना के तत्व : उपनिषदों में अनेक विषयों का वर्णन मिलता है जो मानव जीवन के लिए उपयोगी है। कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता में भी योग तत्वों के साथ-साथ दार्शनिक एवं नैतिक तत्वों का उल्लेख मिलता है। सांसारिक दुःखों का कारण हमारी इन्द्रियों और मन को माना गया है। यमाचार्य द्वारा नचिकेता के माध्यम से मानव को आत्म तत्व के साथ-साथ विद्या-अविद्या, अज्ञानी मानव की दुर्दशा आदि का वर्णन करते हुये नैतिक व दार्शनिक तत्वों का वर्णन किया गया है। कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित योग तत्वों का मानव जीवन में अत्यधिक महत्व है।

कठोपनिषद् में सरल शब्दों में योग की परिभाषा का वर्णन इस प्रकार मिलता है –

यदा पंचावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह ।

बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम् ॥¹⁴

अथार्त् योग के निरन्तर अभ्यास द्वारा मन, बुद्धि व इन्द्रियों को संयमित किया जा सकता है। योग द्वारा अपनी इन्द्रियों, मन एवं बुद्धि को इस प्रकार स्थिर करना की इन्हें परमात्मा के अतिरिक्त किसी भी वस्तु, व्यक्ति, स्थान आदि का ज्ञान न रहे। जिससे फिर किसी भी प्रकार की अभिलाषा न रहे। अतः इसी स्थिरता की स्थिति को योगाचार्यों ने योग की सर्वोत्तम अवस्था माना है—

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम् ।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ ॥¹⁵

जैसा की महर्षि पतंजलि ने कहा है कि 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'¹⁶ अर्थात् चित्त में उठ रही इच्छाओं का निरोध करना ही योग है। कठोपनिषद् में भी यही बात कही गयी है कि जब मन, बुद्धि व इन्द्रियां एक स्थिर अवस्था को प्राप्त कर लेती है तब इसे ही योग कहा गया है। इस स्थिति में मानव सांसारिक समस्त चेष्टाओं, राग, द्वेष से दूर हो जाता है। अतः वह आनन्द स्वरूप को प्राप्त हो जाता है, क्योंकि मनुष्य का भौतिक सुविधाओं में सुख ढूँढना ही समस्त दुःखों का कारण है।

अतः जो मानव सांसारिक विषय वासनाओं, काल्पनिक सुख से दूर रहकर परमात्म स्वरूप को पाना चाहता है उसे निरन्तर योग अभ्यास करना चाहिए। उसका परमेश्वर में दृढ़ विश्वास होना चाहिए कि 'वह' है और मुझे अवश्य मिलेंगे। जब साधकगण इस दृढ़ संकल्प से योग अभ्यास करेगा तो निश्चित विश्वास से अपने हृदय में परमात्म स्वरूप को पायेगा। उसका साक्षत्कार उसे अनुभव होगा।

श्रीमद्भगवद्गीता में योग को परिभाषित करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं—

योगस्थः कुरु कर्माणि संग त्यक्त्वा धनंजय ।

सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥¹⁷

¹³ सिन्हा, प्रो० हरेन्द्र प्रसाद, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 68

¹⁴ कठोपनिषद् – 2.3.10

¹⁵ कठोपनिषद् – 2.3.11

¹⁶ पतंजलि योगसूत्र – 1.2

¹⁷ श्रीमद्भगवद्गीता – 2.48

अर्थात् जब कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन परिजनों के मोहवश अपने धर्म से विमुख हो रहा होता है तब भगवान उसे योग के महत्व को समझाते हुए कहते हैं कि हे अर्जुन! योग द्वारा अपनी इन्द्रियों को स्थिर कर, किसकी जय होगी अथवा पराजय होगी इस आसक्ति को त्यागकर, स्थिर बुद्धि वाला होकर अपने धर्म अथवा कर्तव्य कर्म को करो, क्योंकि अपने कर्मों को बिना किसी फल की भावना से करना ही योग है।

जब योग मार्ग के साधक को योग की परम अवस्था की प्राप्ति हो जाती है तब वह समस्त प्राणी व संसार की प्रत्येक चीज में समान दृष्टि एवं समभाव रखता है। उसका प्रत्येक कार्य ईश्वर के प्रति समर्पित भाव से होता है, उसका चरित्र निर्मल हो जाता है, अहंकार आदि दुर्गुण समाप्त हो जाते हैं। वह प्रत्येक स्थिति में स्थिर बुद्धि वाला होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में योग की एक अन्य परिभाषा कही गयी है कि—

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।

तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।¹⁸

अर्थात् श्रीकृष्ण कहते हैं कि अपने कार्यों व कर्तव्यों को पूरी ईमानदारी, लगन व प्रभु को समर्पित भाव से करना ही योग है, आपके प्रत्येक कार्य में पूरी निपुणता होनी चाहिए यही 'योग' है। इस प्रकार से किये गये कर्म से मनुष्य जन्म-मरण के बन्धन में नहीं पड़ता। श्रीमद्भगवद्गीता के छठे अध्याय में कर्मयोग का वर्णन मिलता है, भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि—

तं विद्याद् दुःख संयोगवियोगं योगसंज्ञितम्।

स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।¹⁹

अर्थात् योग एक मात्र वह ज्ञान या विद्या है जिसके निरन्तर अभ्यास द्वारा मनुष्य इन्द्रियों को संयमित कर दुःखों से मुक्ति पाकर सुख व परम आनन्द को प्राप्त कर सकता है। अतः मानव को भौतिक जगत के मोह बंधन से मुक्त रहते हुए योग मार्ग द्वारा कर्तव्यनिष्ठ बनना चाहिए।

निष्काम कर्म का भाव : प्रत्येक मनुष्य को अपने दैनिक कार्यों को पूरी लगन व निष्काम भाव से करना चाहिए। कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता दोनों ही ग्रन्थों में यमाचार्य एवं भगवान श्रीकृष्ण ने निष्काम कर्म के महत्व को नचिकेता एवं अर्जुन के माध्यम से समझाया है। कठोपनिषद् में कहा गया है कि —

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।

अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।²⁰

जब साधक दृढ़ संकल्प कर लेता है कि भगवान है और निरन्तर योग साधना करता है तो वह विभिन्न प्रकार के ऐहलौकिक और परालौकिक इच्छाओं और कामनाओं से हटने लगता है। अतः कहने का अर्थ है कि मनुष्य को समस्त कर्मों को आसक्ति रहित होकर, प्रभु के प्रति समर्पित भाव से करना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय में कर्मयोग का वर्णन मिलता है। गीता में कहा गया है कि मनुष्य प्रत्येक क्षण कर्म करता रहता है—

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।

कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।²¹

¹⁸ श्रीमद्भगवद्गीता— 2.50

¹⁹ श्रीमद्भगवद्गीता— 6.23

²⁰ कठोपनिषद् — 2.3.14

²¹ श्रीमद्भगवद्गीता— 3.5

मनुष्य को कर्म करना ही पड़ता है चाहे वह इच्छा से करे या अनिच्छा से। मनुष्य स्तब्ध रहता है तो भी उस स्थिति में वह स्तब्ध रहने का कर्म कर रहा होता है। अतः भगवान श्रीकृष्ण मन से अपनी इन्द्रियों को संयमित करके अनासक्त भाव से कर्म करने को ही कर्मयोग कहते हैं। अर्जुन को कहते हैं कि जो इस प्रकार से कर्म करता है, वही श्रेष्ठ है—

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन।

कर्मैन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते।²²

अतः हे अर्जुन! तुम शास्त्रों में वर्णित कर्तव्य कर्म को करो, क्योंकि कर्म करना ही श्रेष्ठ है। मनुष्य को अपने कर्मों को आसक्तिरहित होकर निःस्वार्थ भावना से करना चाहिए। अतः ऐसे समय में श्रीमद्भगवद्गीता का महत्व ओर भी अधिक बढ़ जाता है। सारे विश्व में इस समय यही एक ऐसा ग्रंथ है जो सरल रूप में मानवता को जीवन जीने की सही एवं वैज्ञानिक पद्धति सिखाता है।

आत्म तत्त्व का स्वरूप : प्रस्तुत उपनिषद् में बड़े ही सुन्दर ढंग से प्राणी मात्र के कल्याण हेतु आत्मा के स्वरूप का वर्णन किया गया है। मानव योनी में रहते-रहते परमेश्वर के स्वरूप को जान लेना चाहिए, अन्यथा उसे पुर्नजन्म लेकर नाना प्रकार की योनियों में भटकना पड़ता है, तब कहीं जाकर दूबारा मानव जन्म प्राप्त होता है। कठोपनिषद् में आत्मा के स्वरूप के विषय में यह कथन है कि—

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं, कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे।²³

अर्थात् आत्मा को ज्ञान का स्वरूप माना गया है। जब अज्ञान हटता है तभी आत्मा के स्वरूप का अनुभव होता है। शरीर नश्वर है वह जन्म लेता है और मृत्यु को प्राप्त होता है, लेकिन आत्मा न जन्म लेती है, न मरती है। यह शाश्वत है, यह एक शरीर को त्याग कर दूसरे शरीर को धारण कर लेती है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी आत्मा के स्वरूप का वर्णन इसी प्रकार मिलता है कि आत्मा न किसी काल में पैदा होती है, न मरती है क्योंकि यह नित्य, सनातन है। यह शरीर के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होती। यदि कोई किसी को मारता है वह उसकी देह मात्र को ही मार सकता है। आत्मा तो अमर है। इसी प्रकार मृत्यु को प्राप्त हो रहे प्राणी के मन में भी यदि यह विचार आता है कि आत्मा मर रही है तो यह उसका भ्रम है। अज्ञान के कारण दोनों ही शरीर को आत्मा समझते हैं और इसके वास्तविक अस्तित्व से अनभिज्ञ हैं। परिणामस्वरूप वह किसी न किसी व्याधि आदि से ग्रस्त हो जाता है।

निष्कर्ष :

कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता हमें यह ज्ञान देते हैं कि हमें शरीर और सांसारिक भोगों की अनित्यता, आत्मा की अमरता पर विचार करना चाहिए। क्षणिक भौतिक सुख की लालसा का सर्वथा त्याग करके, अपने हृदय में विराजमान परम परमात्मा स्वरूप को जानने का प्रयास करना चाहिए। नित्य रहने वाले असीम आनन्द को अनुभव करना चाहिए। निरन्तर योग अभ्यास करना चाहिए एवं निष्काम कर्म की भावना का पालन कर अपना जीवन सुखमय बनाना चाहिए। सकारात्मक विचारों को आत्मसात् करना चाहिए और स्वाध्याय करना चाहिए। वर्तमान समय में देखा जाये तो हमारी समस्याओं

²² श्रीमद्भगवद्गीता— 3.7

²³ कठोपनिषद्—1.2.18

व बिमारियों का सबसे बड़ा कारण हमारा रहन-सहन, हमारा अनैतिक व्यवहार, बाहरी दिखावा, एक दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ आदि अनेक कारण हैं। समस्त विकृतियों का सरल एवं यौगिक समाधान कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता में निहित है। इन ग्रंथों के ज्ञान द्वारा मानव को ऐसी शिक्षाएं मिलती हैं जो उनके जीवन को समृद्धि की ओर अग्रसर करती हैं। यौगिक दृष्टिकोण से देखे तो समस्त समस्याओं का कारण अज्ञान है जिनको योग तत्वों द्वारा दूर किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

- [1]. वैदिक वाग् ज्योतिः, वर्ष 2020, अंक 14, vol. 8, पेज संख्या 45
- [2]. रिसर्च मैटर्स, फरवरी, बैंगलूरु, 5, 2021
- [3]. B.B.C, NEWS, हिन्दी, 21 मार्च 2020
- [4]. विश्वनोई, मनोज, 'उपनिषद् सार संग्रह', किताब महल
- [5]. आचार्य पं० राम शर्मा एवं शर्मा भगवती देवी, वर्ष 2016, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, पृ० 12
- [6]. गोयन्दका, हरिकृष्ण दास, सं० 2074, 'ईशादि नौ उपनिषद्', गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ० 75
- [7]. आचार्य पं० राम शर्मा एवं शर्मा भगवती देवी, वर्ष 2016, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, पृ० 50
- [8]. गौड़, डॉ अक्षय कुमार, 'उपनिषद् एवं योगवाशिष्ठ सार', पृ० 96
- [9]. सिन्हा, प्रो० हरेन्द्र प्रसाद, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 66
- [10]. गांधी, महात्मा, वर्ष 2009, 'गीता माता', इण्डिया बाईडिंग हाउस
- [11]. सिन्हा, प्रो० हरेन्द्र प्रसाद, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 68